(देश देशान्तरों में प्रचारित, सब से सस्ता, उच्च कोटि का आध्यात्मिक-पत्र)

सन्देश नहीं मैं स्वर्ग लोक का लाई ।
इस भूतल को ही स्वर्ग बनाने आई ॥

मूल्य १॥) | सम्पादक—श्रीराम शर्मा । | [illegible]

वर्ष ४] | मथुरा, मई सन १९४३ | [अंक ५

शक्ति का दुरुपयोग न करो !

[illegible] में इतना [illegible] मौजूद है कि उसमें [illegible] कुछ ही क्षणों के अन्दर जल-बल कर भस्म हो [illegible] है, परन्तु क्या कभी उसने ऐसा किया है ? क्या वह कभी अपनी महानता और मर्यादा को भंग करता है ? [illegible] में अनेकानेक—एक से एक ऊँची—शक्ति सम्पन्न सत्तायें मौजूद हैं, पर वे कभी अमर्यादित नहीं होतीं । फिर तुम आपे से बाहर क्यों हुए जा रहे हो ? जो शक्तियाँ और योग्यता आज तुम्हें प्राप्त हैं वे ईश्वर ने लोक सेवा और [illegible] उन्नति के लिये दी हैं, न कि इस लिये कि उनसे असहाय लोगों को सताओ, उनके अधिकारों का हरण करो और अनीति बरतो। देखो, तुम्हारा अन्याय तभी तक चल सकता है जब तक सहन करने वाले मर्यादा के अन्दर हैं, [illegible] सकता है कि तुम्हारे बहुत सताये जाने पर वे उबल पड़ें और वैसे ही क्रूर कर्म करने पर उतर आवें जैसे कि तुम [illegible] रहे हो, तब क्या होगा ? जरा विचार तो करो, तब तुम्हारा आज का बर्ताव तुम्हारे लिये कितना विषम घातक और [illegible]दाई परिणाम उपस्थित कर देगा ।

इस लिये, ठहरो ! शक्ति शालियो ! जुल्म करने से पहले एक घड़ी ठहरो !! और विचार करो कि तुम्हारी [illegible] का सर्वोत्तम उद्देश्य और उपयोग क्या है ? ईश्वर ने शक्ति की रचना उन्नति और सेवा के लिये की है. [illegible] शालियो ! जुल्म और अपहरण में उनका दुरुपयोग न करो ।

* मनुष्य का देवता बनाने वाला ज्ञान

जो ज्ञान युगों के प्रयत्न से मिलता है, उसे हम अनायास ही आपके सामने उपस्थित करते हैं।

यह बाजारू किताब नहीं है, इनकी एक एक पंक्ति चिर कालीन अनुभव के आधार पर लिखी गई है।

१—मैं क्या हूँ ?—आत्मा का दर्शन करने के सरल साधन मू० ।=)

२—सूर्य चिकित्सा विज्ञान—सूर्य की प्रचंड रोग नाशक शक्ति द्वारा वैज्ञानिक ढङ्ग से कठिन रोगों की चिकित्सा। मू० ।=)

३—प्राण चिकित्सा विज्ञान—मनुष्य के अन्दर गजब की विद्युत शक्ति है। उसके द्वारा समस्त रोगों का इलाज। मू० ।=)

४—परकाया प्रवेश—मैस्मरेजमके ढङ्ग पर आत्म शक्ति को दूसरे के शरीर में प्रविष्ट करने की साधना। मू० ।=)

५-स्वस्थ और सुन्दर बनानेकी अद्भुत विद्या-आध्यात्मिक सरल साधनों द्वारा तन्दुरुस्त और खूब-सूरत बनाने के उपाय। मू० ।=)

६—मानवीय विद्युत के चमत्कार—शरीर की बिजलीसे आश्चर्यजनक कार्यों का वैज्ञानिक विवरण।=)

७-स्वर योग से दिव्य ज्ञान—स्वरोदय विद्या द्वारा शुभ और भविष्य की बातों का जान लेने की रहस्य पूर्ण साधना। मू० ।=)

८—भोग में योग—शीघ्र पतन, स्वप्नदोष, प्रमेह, नपुंसकता आदि विकारों को योग साधनों से दूर करने और मनचाही स्तम्भन शक्ति प्राप्त करने की गुप्त विधियां। मू० ।=)

९—बुद्धि बढ़ाने के उपाय—जो स्मरण शक्ति बढ़ा कर बुद्धिमान बनना चाहते हैं, उनके लिये यह कल्प वृक्ष के समान है। मू० ।=)

१०-धनवान बनानेके गुप्त रहस्य—धन-कुबेरों द्वारा कार्य रूप में लाई हुई ऐसी विधियां हैं जो आपको भी धनवान बना सकती हैं। मू० ।=)

११-पुत्र या पुत्री उत्पन्न करने की विधि—मन चाही संतान प्राप्त करने के सारे रहस्य इस पुस्तक में बतला दिये हैं। मू० ।=)

१२-वशीकरण की सच्ची सिद्धि—दूसरों को वश में करने के लिये सच्चे और हजारों बार आजमाये हुए प्रयोग। मू० ।=)

१३-मरने के बाद हमारा क्या होता है ? मृत्यु के उपरान्त प्राप्त होने वाले स्वर्ग, नरक, पुनर्जन्म, प्रेत योनि, मृतकों का साक्षात्कार आदि बातों पर अनुभव पूर्ण वर्णन। मू० ।=)

१४-जीव जन्तुओं की बोली समझना—मूक जीव जन्तुओं की भी स्वतन्त्र भाषा है और वे भी हमारी ही तरह बात चीत करते हैं। उसे समझनेका महत्व पूर्ण विधान। मू० ।=)

१५-ईश्वर कौन है ? कहाँ है ? कैसा है ? ईश्वर सम्बन्धी सम्पूर्ण शङ्काओं का समाधान करते हुए परमात्मा सम्बन्धी जानकारी के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डाला गया है। मू० ।=)

१६-क्या धर्म ? क्या अधर्म ?—धर्म अधर्म की गूढ़ गुत्थी को बड़ी गम्भीरता पूर्वक सुलझाया गया है। मू० ।=)

१७-गहना कर्मणोगतिः—कर्मों का उलटा फल मिलते हुए देखकर बुद्धि भ्रम में पड़ जाती है वे इस दार्शनिक ग्रन्थ का मनन करें। मू० ।=)

१८—जीवन की गूढ़ गुत्थियों पर तात्विक प्रकाश-जीवन की उलझी हुई समस्याओं का अच्छा हल उपस्थित किया है। मू० ।=)

१९—पंचाध्यायी—यह आधुनिक युग की समस्त समस्याओं पर विवेक युक्त व्यवस्था देने वाली गीता है। संस्कृत के मूलश्लोक श्लोक नीचे अन्वय सहित अर्थ, सुन्दर जिल्द इस पर भी मू० ।।।) अजिल्द—।।)

कमीशनके लिये लिखा पढ़ी करना व्यर्थ है। हां ! ३) से अधिक पुस्तकें लेने पर डाक व्यय माफ होगा।

पता—मैनेजर 'अखंड ज्योति' मथुरा।
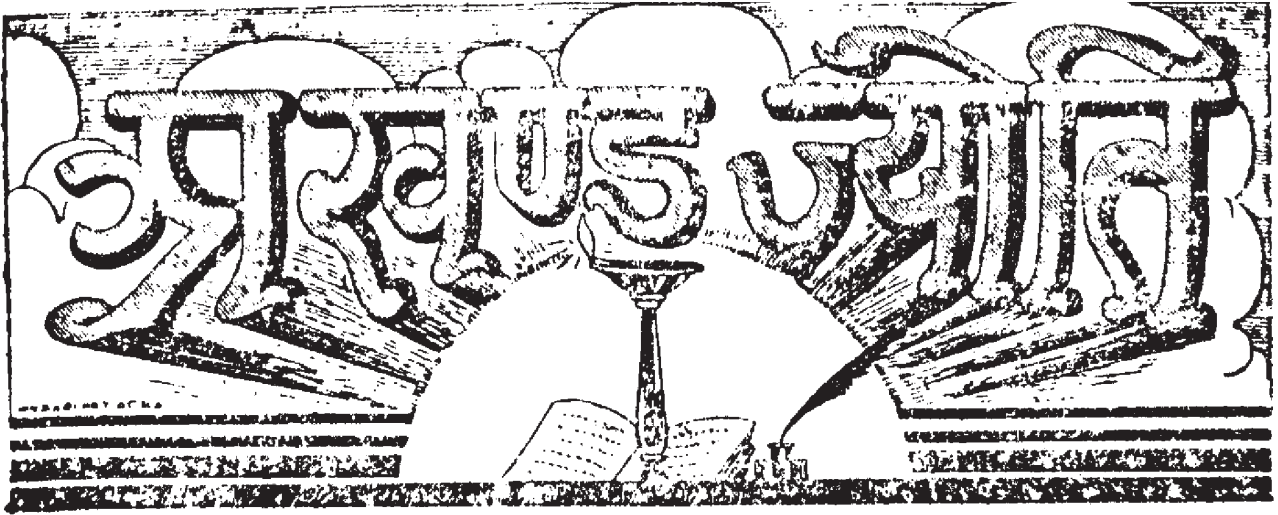
सुधा बीज बोने से पहिले, काल कूट पीना होगा।
पहिन मौत का मुकुट विश्व-हित, मानव को जीना होगा ॥

वर्ष ४] १ मई सन् १९४३ [अङ्क ५

शांति-किरण

[रचयिता—दिनकरप्रसाद शुक्ल "दिनकर" विशारद गोहद]

नभ निशीथ के ही विराम पर,
तो जग ने प्राच्यारुण देखा ॥
दुख का अनुभव ही तो बढ़कर,
बन जाता है सुख का लेखा ॥
खण्डहरों पर ही तो इक दिन,
होता है वैभव का नर्तन ॥
जीवन की अन्तिम सीमा ही,
तो है नव जीवन की रेखा ॥
मृग मरीचिका में ही तो,
मानव ! विनाश का है आराधन ॥
पान सके यदि पूर्ण खण्ड तू,
प्राप्त खण्ड को ही सुख से खा ॥

उतर स्वर्ग से भूमण्डल पर 'सत्' की अमरज्योति आती है।
वेणु बजाती सत्य-प्रेम की, सुमधुर न्याय गान गाती है।

मथुरा. १ मई सन् १९४३ ई०

प्रार्थना से बल प्राप्त कीजिये.

बिजली के बारे में थोड़ी सी जानकारी रखने वाले जानते हैं, कि ऋण (नेगेटिव) और धन (पाजेटिव) दो प्रकार की धारायें मिलकर स्फुरण उत्पन्न करती हैं, मनुष्य शरीर में यह दोनों प्रकार की धारायें विद्यमान हैं और उन्हीं के आधार पर जीवन के सारे कार्यों का सञ्चालन होता है।

किसी मनुष्य को देखकर उसके गुणों को जानकर हम आसानी से मालूम कर सकते हैं, कि उसमें किस धारा का बाहुल्य है। नेगेटिव को अनिश्चयात्मक और पाजेटिव को निश्चयात्मक कहा जाता है। बाह्य प्रभावों से तुरन्त प्रभावित हो जाना और हर प्रकार की हवा के प्रवाह में बहने लगना यह अनिश्चयात्मक स्वभाव हुआ और अपने निश्चय को दृढ़ रखना, बिना विचारे किसी के वाग्जाल में न फँसना, विपत्ति बाधाओं के होते हुए भी अपने पथ पर दृढ़ बने रहना यह निश्चयात्मक स्वभाव कहा जाता है।

मनुष्यों के शरीरों की बनावट एकसी दिखाई देने पर भी उनमें छोटे बड़े का जो असाधारण अन्तर देखा जाता है, उसका कारण और कुछ नहीं, केवल इन धाराओं की भिन्नता और उनकी मात्रा की न्यूनाधिकता है। बेशक विद्या, बुद्धि, धन और बल का भी अपना स्थान है, पर इन चारों वस्तुओं की भी जो जननी है और अनेक प्रकार की योग्यताओं का जिसमें से उद्भव होता है, उनका वह केन्द्र इन विद्युत धाराओं में ही है।

जिस व्यक्ति का निश्चयात्मक भाव है, जिसके अन्दर धन विद्युत का बाहुल्य है, वह हर प्रकार की कठिनाइयों का मुकाबिला करता हुआ, सुख-दुख को बराबर समझता हुआ, कर्तव्य पथ पर आरूढ़ रहेगा और मन को गिरने न देगा, किन्तु जो ऋण विद्युत वाला है, उस अनिश्चय स्वभाव के मनुष्य को अपना छोटा सा कष्ट पहाड़ के समान दिखाई देगा और जरासी विपत्ति आने पर कि कर्तव्य विमुख हो जायगा। आज एक इरादा किया है, कल उसे बदल देगा और तीसरे दिन नया प्रोग्राम बना लेगा।

हर प्रकार की उन्नति और सफलता एवं पतन और विफलता के बीज इन्हीं ऋण धन स्वभावों में निहित हैं। क्या व्यापार, क्या नौकरी, क्या राजकीय धर्म सभी कामों में उत्साही पुरुष सन्तोष जनक फल प्राप्त करेगा। किन्तु निराशा और निर्बलता के चंगुल में फँसा हुआ व्यक्ति प्राप्त की हुई सफलता को भी गँवा देगा। इसलिये जो मनुष्य अपने जीवन को तेजस्वी और प्रतिभाशाली बनाना चाहते हैं, उनके लिये आवश्यक है, कि अपने अन्दर धन विद्युत की मात्रा में वृद्धि करें, इच्छा शक्ति को बढ़ावें।

बीमारी से बचने और उसे जल्द अच्छा कर लेने में भी यही नियम काम करता है। जिन्हें आत्म विश्वास है और इच्छा शक्ति को बलवान बनाये हुए हैं वे अपनी मानसिक दृढ़ता के द्वारा ही छोटे मोटे रोगों को मार भगावेंगे और बीमारी से बचे रहेंगे। कदाचित् बीमार भी पड़े तो बहुत जल्द अच्छे हो जावेंगे, जब कि निराशावादी मामूली बीमारी को अपने आप इतनी बढ़ा लेते हैं कि वही उनके प्राण घातक तक बन जाती है।

जिस प्रकार लोग पैसा कमाना अपना कर्तव्य समझते हैं, उसी प्रकार उन्हें चाहिए कि इच्छा शक्ति-निश्चयात्मक स्वभाव-धन विद्युत-को भी बढ़ाने का प्रयत्न करें। पैसे के समान यह योग्यता आँखों से दिखाई नहीं पड़ती तो भी पैसे के समान, बल्कि उससे भी अनेक गुनी अधिक उपयोगी है।

स्वभाव की निर्बलता को दूर करने का सब से उत्तम उपाय है—ईश्वर प्रार्थना करना। इसका अर्थ यह नहीं, कि हम कुछ शब्दों को तोते की तरह रटते रहें और एक निर्धारित कवायद करके उठ बैठें।

प्रार्थना हृदय के अन्तस्थल से होनी चाहिए, क्योंकि अदृश्य जगत् में से उपयोगी तत्वों को खींचने की चुम्बक शक्ति उसी स्थान में है! सच्चे हृदय से पूर्ण मनोयोग के साथ की हुई प्रार्थना कभी निष्फल नहीं जा सकती, उसका फल अवश्य ही मिलेगा। प्रार्थना की वैज्ञानिक विवेचना यह है, कि जिस वस्तु की हमें आवश्यकता है उसे अदृश्य भण्डार से प्राप्त करना। प्रभु का अक्षय भण्डार अपने पुत्रों के लिये सदैव खुला हुआ है, उसमें से हर कोई अपनी इच्छित वस्तु मन मानी मात्रा में ले सकता है, बशर्ते कि वह लेना चाहे और लेने के लिये प्रयत्न करे। इस चाहने और प्रयत्न करने का नाम ही प्रार्थना है।

तुम्हें ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए कि—"प्रभो! हमें ऐसी शक्ति दीजिए जिसके द्वारा सत्य का पालन और पाप का संहार कर सकें। आप सच्चिदानन्द हैं, हमें भी अपने समान बनाइये, जिससे अपना और दूसरों का कल्याण कर सकें" जब किसी के घर में चोर घुस आता है तो वह चोर से आत्म रक्षा करने के लिए लाठी आदि साधन ढूंढता है, तदुपरान्त उसे भगाने का प्रयत्न करता है। इस प्रकार हमें अपनी त्रुटियों को हटाने और सर्वतो मुखी उन्नति प्राप्त करने के लिये प्रार्थना को अपनाना चाहिये।

जिन्हें निश्चयात्मक स्वभाव प्राप्त करने की इच्छा है, उन्हें चाहिये कि निष्ठा पूर्वक ईश्वरकी प्रार्थना करते रहें। विशुद्ध भाव से की हुई प्रार्थना इच्छित फल देने की परिपूर्ण योग्यता रखती है, इसमें तनिक भी सन्देह नहींहै।

पृथ्वी का जो खोदते हैं, वह उनको भी आश्रय देती है, इसी तरह बुराई करने वालेके साथ भी तुम्हें भलाई ही करनी चाहिये।

योगी कार्य क्षेत्र में उतर रहे हैं।

(योगी अरविन्द घोष)

भारतवर्ष के ऋषि मुनि और योगी गण जो गिरि-कन्दराओं तथा निर्जन वनों में परमानन्द का चिन्तन करते हुए समय बिता रहे थे, वे अब भगवान् की प्रेरणा पाकर विश्व को सच्चे ज्ञानसे आलोकित करने के लिये कार्य क्षेत्र में उतरे हैं। इसी से आज मृत, निर्जीव और प्राण हीन भारत फिर जाग उठा है। क्षीण काय, दुर्बल शरीर, रक्त मज्जा हीन, भारत के सपूत, खाली हाथ बिना सहायक के अस्त्र शस्त्र हीन होते हुए भी आज संसार पर विजय प्राप्त करने के लिये कमर कस कर तैयार हुए हैं। संसार की मदान्ध जातियाँ मद में चूर होकर भारत को तुच्छातितुच्छ समझ कर उसकी अवहेलना करती थीं, पर आज इन थोड़े दिनों में ही समस्त संसार विस्मित और विस्फारित नेत्रों से भारत की ओर देख रहा है। भारतवर्ष की यह जागृति, स्वप्न नहीं है, मिथ्या नहीं है, भ्रम नहीं है, भारत वर्ष जाग उठा है, यह जागृति जितनी शीघ्रता से संपादित हुई है, उतनी ही स्थायी रहेगी।

यद्यपि भारतवर्ष के पास इस समय कुछ नहीं है, उसके पास उत्थान के कोई साधन नहीं है, फिर भी अपने तपोबल के सहारे पर वह सब कुछ कर लेगा। उसको ईश्वर पर भरोसा है, विश्वास है। यह विश्वास इस विश्व को जड़ बतलाने वालों की सीमा से सर्वथा दूर है और उनके लिए अगम्य है। भगवान् की सहायता से ही वह समस्त संसार को ज्ञान की दीक्षा देगा। भूतल के सिंहासन पर जनक, अज्ञात शत्रु तथा कार्तवीर्य की भाँति आरूढ़ बैठकर संसार की समस्त जातियों का शासन करेगा और यह विश्व एकबार पुनः स्वर्ग हो जायगा।

आकाश से बातें, संगमरमर के मन्दिर तथा पाषाण प्रतिमा तुम्हारे हृदय के दाह को नहीं मिटा सकती, उसके लिये देशके भूखे, प्यासे नारायणों और दुर्बल विष्णुओं की सेवा करनी होगी।

ब्रह्मचर्य का तत्व-ज्ञान।

चैतन्य प्राणियों की उत्पत्ति पर प्रकाश डालते हुए प्रश्नोपनिषद् में बताया गया है कि सर्व प्रथम दो शक्तियों का आविर्भाव हुआ एक रयि दूसरा प्राण। कात्यायन कबन्धी के प्रश्न का उत्तर देते हुए महर्षि पिप्पलाद ने बताया है, कि इन्हीं दो शक्तियों के संमिश्रण से चैतन्य जीव विभिन्न आकार प्रकार में निर्मित हुए। विद्युत विज्ञानवादी रयि और प्राण शक्ति को "नेगेटिव" और 'पाजीटिव' कहते हैं। समाज शास्त्री इन्हें नर शक्ति एवं नारी शक्ति बताते हैं, अध्यात्म वादी प्रकृति, पुरुष नाम देते हैं, मनोविज्ञान के अनुसार यह इच्छा और क्रिया कहे जाते हैं, योग शास्त्र में इन्हीं को ज्ञान, भक्ति कह कर पुकारा गया है, सारे जगत में सूर्य और चन्द्रमा इनकी प्रति मूर्तियां हैं।

क्रम यह है कि रयि द्वारा प्राण का आकर्षण होना चाहिए। जिस क्रम से रयि शक्ति विकसित होती है उसी क्रम से प्राण की धारणा होती है। घड़े में जितना स्थान है उतना ही पानी भरना चाहिए, यदि घड़े के स्थान की परवाह न करके अन्धाधुन्ध पानी भरा जायगा, तो उससे विकृति उत्पन्न होगी और परिणाम हानिकर होगा। भक्ति की अपेक्षा ज्ञान अधिक होगा तो नास्तिकता बढ़ेगी, जितनी इच्छा है उससे अधिक क्रिया करनी पड़ेगी, तो करने वाला थक जायगा और कष्ट अनुभव करेगा। सृष्टि के सभी जीव इस नियम से परिचित हैं और उसका यथा विधि पालन करते हैं। रति संयोग के सम्बन्ध में समस्त पशु पक्षी मादा की इच्छा का पालन करते हैं। सृष्टि का कोई प्राणी मादा की सम्भोग इच्छा के अतिरिक्त उस पर किसी प्रकार का दबाव नहीं डालता।

मादा की सम्भोगेच्छा बहुत ही स्वल्प और एक विशेष आवश्यकता होने पर प्रकट होती है। संकोच और विकास (Contraction & Expansion) के नियमों में मादा बँधी हुई है। फूलों की कलियाँ बन्द रहती हैं, अपनी सामर्थ्य बढ़ाने तक चुप रहती हैं, जब उनके भीतर संकोच की मर्यादा पूरी हो जाती है और रयि का पर्याप्त संचय हो जाता है, तो वे अपनी रूप शक्ति का विकास करने के निमित्त खुलती हैं और प्राण रूप क्रिया शक्ति का संयोग होने पर फल पैदा करने के लिए फिर संकोच कर लेती हैं। रयि का उत्तेजन प्रकृत स्वभाव में उचित अवसर पर होता है और प्राण प्राप्त होते ही तुरन्त शान्त हो जाता है और अपना उद्देश्य पूरा करके पुनः शक्ति संचय करके वैसा ही अवसर आये बिना फिर जाग्रत नहीं होता। स्त्री की सम्भोगेच्छा स्वाभाविक रूप से ऋतु काल में होती है, सो भी हर ऋतु में नहीं, यदि कोई शारीरिक एवं मानसिक कष्ट हो तो ऋतु होने पर भी रयि का उत्तेजन नहीं होता।

मैथुन केवल स्त्री की रयि उत्तेजन की आवश्यकता की पूर्ति के लिए होना चाहिए। चटोरी लालसा द्वारा जैसे भूख न रहने पर भी सुस्वादु भोजनों के लिए मन चलता है, वैसे ही स्त्रियों को चटोरी काम वासना भी हो सकती है। इसकी सूक्ष्म दृष्टि से विवेचना करनी चाहिए और मानसिक विकार का विरोध करते हुए केवल स्वाभाविक आवश्यकता का ही आदर करना चाहिए। चटोरी भूख को पूरा करते रहने से शरीर रोगों का घर बन जाता है, वैसे ही जीवन की मूल भूत चेतना रयि का दुरुपयोग होने से स्त्रियों का जीवन तत्व नष्ट होता है और मानव शरीर की अनेकानेक महत्ताओं से उन्हें सर्वथा वंचित रहना पड़ता है।

पुरुषों का अपना दृष्टिकोण पूर्ण ब्रह्मचारी रहने का होना चाहिए। उन्हें स्वेच्छा से वीर्य नष्ट करने का कोई अधिकार नहीं है। रयि की तृप्ति के लिए प्राण प्रदान करने की उन्हें अनुमति मिली हुई है, इसका उपयोग दूसरे पक्ष की आवश्यकता पर निर्भर है। पुरुष का अपना निजी विचार हर समय कठोर ब्रह्मचर्य के लिए रहना चाहिए, क्योंकि उसका यही कर्तव्य है।

यह समझना बड़ी भारी भूल है, कि वीर्य शरीर का एक मल है और उसे निकालना ही चाहिए। यदि ऐसा बात होती तो मलमूत्र की तरह वीर्य के लिए भी कोई विशेष व्यवस्था होती, किन्तु देखा जाता है, कि शरीर में

भी वीर्य के आहार नहीं करते हैं। यह अमूल्य पदार्थ रक्त में अदृश्य रूप से इस प्रकार छिपा हुआ है, कि बिना अत्यन्त आवश्यकता के इसका उपयोग न हो सके। उपनिषदों में रेतस् शब्द 'तेज' के अर्थ में उपयोग किया गया है। वीर्य एक चिकनी लसदार वस्तु नहीं है, वरन् जीवन का प्रत्यक्ष तेज है। आत्मा, आत्मा से उत्पन्न होता है, न कि [illegible] मल मूत्र से। रक्त, मांस, हड्डी आदि धातुओं से यदि आप सन्तान उत्पन्न करना चाहें तो यह नहीं हो सकता, क्योंकि उनमें चैतन्य तत्व नहीं है। वीर्य में आत्मा का तेज है, शक्ति है, चैतन्य है, इसलिए तो वह सन्तान उत्पन्न कर सकता है। विचार तत्व को प्रकट करने के लिए मस्तिष्क एक साधन है। इस प्रकार आत्मा के चैतन्य तत्व का प्रत्यक्ष दर्शन वीर्य रूप में होता है।

वीर्य शरीर का एक भाग है, इसका खण्डन उन उदाहरणों से हो जाता है, जिनमें कि अन्धे पिता के नेत्रों वाली और अंग भंग पिताओं के पूर्ण अंगों वाली सन्तान उत्पन्न होती है यदि वीर्य शरीर का ही एक भाग होता तो जो अंग पिता के शरीर में नहीं है वह बालक में भी न होने चाहिए थे। अंगों के नष्ट होने से आत्मा में से वे भाग चले नहीं जाते, इसलिये वीर्य का तेज, पूर्ण अंग वाली सन्तान उत्पन्न करने में समर्थ रहता है, मरे हुए व्यक्ति का वीर्य क्या किसी को गर्भ धारण करा सकता है? लसदार पदार्थ लकड़ी के समान है। आत्म तेज की अग्नि जब उसमें सम्मिलित रहती है तब उसमें प्रज्वलित होने से क्रिया शीलता आती है।

आत्म तेज एक [illegible] शक्ति है, वह मानव जीवन को विकसित करने के लिए उत्तेजना देती है। उसे अनेक दिशाओं में प्रगति करनी होती है और इस सब के लिए शक्ति का प्रवाह वीर्य द्वारा प्राप्त होता है। नगर भर में बिजली द्वारा अगणित मशीनों पर आश्चर्यजनक कार्य होते रहते हैं, पर उद्गम केन्द्र "बिजली घर" में ही है। मनुष्य के सामने एक बड़ी यात्रा पड़ी हुई है, उसे ठीक तरह पूर्ण करने के लिए शरीर की मोटर में पेट्रोल भरा गया है, किन्तु हाय! कितने दुख की बात है, कि हम लोग ऐसे बहुमूल्य पदार्थ को क्षण भर के तुच्छ स्पर्श सुख के लिये बर्बाद कर रहे हैं। मोटर के पेट्रोल को आतिशबाजी का तमाशा करने में फूंक रहे हैं। जो शक्ति हमें सर्वथा सुरक्षित रखनी चाहिये और स्वेच्छा से जिसका एक बूंद भी स्पर्श सुख के लिए खर्च नहीं करना चाहिये, उस बहुमूल्य पदार्थ को मानसिक विकारों की दियासलाई से जला कर नष्ट कर रहे हैं। हाय! हम अपने पाँव में अपने आप कुल्हाड़ी मारने का यह भयानक खेल क्यों खेल रहे हैं? अपनी चिता के लिये अपने आप लकड़ियां क्यों इकट्ठी कर रहे हैं?

मादक द्रव्यों से दूर रहो।

[महात्मा गान्धी]

सिगरेट, चाय, कहवा वगैरह जीवन के लिए कुछ जरूरी चीज़ नहीं हैं। अगर जीते रहने के लिये चाय या कहवा जरूरी हों तो यह अच्छा है कि इन्हें न पीकर सो जाया जाय। हमें इनका गुलाम नहीं बनना चाहिए। मगर सिगार या सिगरेट पीना तो बिलकुल ही छोड़ना होगा। सिगार पीना तो अफीम खाना जैसा है और सिगार में सचमुच ही जरा ही अफीम होती है। ये चीजें स्नायुओं पर असर करती हैं और फिर इनसे पीछा छुड़ाना असम्भव होजाता है। अगर तुम सिगार सिगरेट, चाय, काफी आदि पीने की आदत छोड़दो तो अपने आप ही देखोगे कि समय, और पैसे की कितनी बचत होती है और स्वास्थ्य की बरबादी कितनी रुक जाती है। टालस्टाय ने एक स्थान पर लिखा है कि कोई शराबी खून करने से तभी तक हिचक रहा था जब तक कि उसने सिगरेट नहीं पिया। मगर सिगरेट की फूंक उड़ाते ही वह उठ खड़ा हुआ और 'मैं क्या कायर हूँ' कहता हुआ खून कर बैठा। टालस्टाय ने जो लिखा है अनुभव से ही लिखा है। [illegible] से अधिक सिगरेट का [illegible] करते हैं। मगर तुम भूल मत करो कि शराब और तम्बाकू में शराब कम बुरी है। नहीं, तम्बाकू अगर तक्षक है तो शराब पशुओं का राजा है। इनसे तो सब प्रकार बचना ही श्रेयस्कर है।

धर्म स्वीकार करने से पहले।

[श्री स्वामी रामतीर्थ]

किसी धर्म को इस लिए अंगीकार मत करो कि यह सब से प्राचीन है। इसका सब से प्राचीन होना इस के सच्चे होने का कोई प्रमाण नहीं है। कभी-कभी पुराने-से-पुराने घरों को गिराना उचित होता है और पुराने वस्त्र अवश्य बदलने पड़ते हैं। यदि कोई नये-से-नये मार्ग या रीति विवेक की कसौटी पर खरी उतरे, तो वह उस ताज़ा गुलाब के फूल के सदृश उत्तम है जिस पर ओस चमकती हुई आंस के कण जगमगा रहे हों।

किसी धर्म को इस लिए स्वीकार मत करो, कि यह सब से नया है। सब से नई चीजें समय की कसौटी से न परखी जाने के कारण सर्वथा सर्व-श्रेष्ठ नहीं होती।

किसी धर्म को इस लिए मत स्वीकार करो कि उस पर विपुल जन संख्या का विश्वास है, क्योंकि विपुल जन संख्या का विश्वास तो वास्तव में शैतान अर्थात् अज्ञान के धर्म पर होता है। एक समय था कि जब विपुल जन संख्या गुलामी की प्रथा को स्वीकार करती थी, परन्तु यह बात गुलामी की प्रथा के उचित होने का कोई प्रमाण नहीं हो सकती।

किसी धर्म पर इसलिये श्रद्धा मत करो कि उसे थोड़े से गिने-चुने लोगों ने माना हुआ है। कभी-कभी अल्प जन-संख्या जो किसी धर्म को अंगीकार कर लेती है, (अज्ञान के) अन्धेरे में भ्रांत-बुद्धि होती है।

किसी धर्म को इस लिये अंगीकार मत करो कि यह किसी त्यागी द्वारा अर्थात् ऐसे मनुष्य द्वारा प्राप्त हुआ है कि जिस ने सब कुछ त्यागा हुआ है, क्योंकि हमारी दृष्टि में कई ऐसे त्यागी आते हैं कि जिन्होंने सब कुछ त्यागा होता है, पर वे जानते कुछ भी नहीं हैं, और यथार्थ रूप से वे उन्मादी होते हैं।

किसी धर्म को इस लिए अंगीकार मत करो कि यह पुरुषों और भूपतियों द्वारा प्राप्त हुआ है। राजा लोगों में प्रायः आध्यात्मिक धन का पूरा अभाव रहता है।

किसी धर्म को इस लिये अंगीकार मत करो कि वह ऐसे मनुष्य का चलाया हुआ है कि जिसका चरित्र परम श्रेष्ठ है। अनेकशः परम श्रेष्ठ चरित्र के लोग सत्य का निरूपण करने में असफल रहे हैं। हो सकता है कि किसी मनुष्य की पाचन शक्ति असाधारण रूप से प्रबल हो, तो भी उसे पाचन क्रिया का कुछ भी ज्ञान न हो। यह एक चित्रकार है जो कला चातुर्य का एक मनोहर, उत्कृष्ट और अत्युत्तम नमूना दिखलाता है, परन्तु वही चित्रकार शायद संसार भर में अत्यन्त कुरूप हो। ऐसे भी लोग हैं जो अत्यन्त कुरूप होते हैं पर तो भी वे सुन्दर तत्वों का निरूपण करते हैं। सुकरात इसी प्रकार का मनुष्य था।

किसी धर्म पर इस कारण श्रद्धा मत करो कि वह किसी बड़े प्रसिद्ध मनुष्य का चलाया हुआ है। सर आईज़ाक न्यूटन एक बहुत प्रसिद्ध मनुष्य हुए हैं तो भी उसकी प्रकाश-सम्बन्धी निर्गम मीमांसा (emissary theory ot light) असत्य है।

जिस किसी चीज को स्वीकार करो या जिस किसी धर्म पर विश्वास करो, तो उसकी निजी श्रेष्ठता के कारण करो। उसकी स्वयं आप जाँच पड़ताल करो। खूब छान बीन करो।

अपनी स्वतन्त्रता को बुद्ध, ईसा मसीह, मोहम्मद या कृष्ण के हाथों न बेच डालो।

जब तक आप स्वयं अपने अन्तर्गत अन्धकार को दूर करने के लिये उद्यत नहीं होते, तब तक संसार में चाहे तीन सौ तेतीस करोड़ ईसा मसीह आजावें, तो भी कोई भला नहीं हो सकता दूसरों के आश्रय मत रहो।

सबधर्मों का लक्ष्य 'अपने ऊपर से पर्दे का हटाना अर्थात् अपने आपका स्पष्ट निरूपण करना है।

सत्य धर्म का मतलब ईश्वर शब्द पर विश्वास की अपेक्षा भलाई पर विश्वास करना है।

जिसने तुम्हारे साथ बुरा बर्ताव किया है उसके साथ भी शुद्धाचरण रखो। बदला लेने के विचार को दृष्टि में न रखो।

ईसप की नीति शिक्षा।

(१)

एक बकरी अपने झुण्ड में चर रही थी। झुण्ड का चरवाहा बड़ा उपद्रवी था, उसने एक पत्थर खींचकर बकरी को मारा जिससे उसका सींग टूट गया। अपने कुकर्म पर चरवाहा बहुत डरा और बकरी से कहने लगा—बहन! तू मालिक से शिकायत न करना, नहीं तो वह मुझे नौकरी से अलग कर देगा। बकरी ने कहा—न कहने पर भी चुप नहीं छिपता। मेरे चुप रहने पर भी यह टूटा हुआ सींग सारी कथा अपने आप कह देगा।

पाप कर्म प्रकट हुए बिना नहीं रह सकते।

(२)

एक गंजे आदमी के सिर के बाल उड़ गये थे तो उसने अपनी झेंप मिटाने के लिए नकली बालों का गुच्छा बनाकर सिर पर बाँध लिया, ताकि कोई पहचान न सके। एक बार उसका गुच्छा सिर पर से गिर पड़ा तो उसके सब मित्र गंजा सिर देखकर हँस पड़े। वह आदमी भी झेंप मिटाने के लिए मित्रों के साथ हंस पड़ा और बोला जब मेरे असली बाल ही चले गये तो नकली बाल साथ देंगे, इसकी क्या आशा है।

जो आदमी अपनी सहायता आप करना बन्द कर देता है, दूसरे उसकी भला क्या सहायता कर सकते हैं?

(३)

दो मेंढकों में मित्रता थी। उनमें से एक तालाब में रहता था दूसरा मोरी में। तालाब का मेंढक मोरी के मेंढक से कहता—भाई इस साफ पानी से भरे हुए तालाब में आकर क्यों नहीं रहते? मोरी का मेंढक कहता—तालाब में अधिक खतरे हैं मोरी में कोई विपत्ति नहीं। एक दिन बैलगाड़ी मोरी में होकर निकली मेंढक पहिये के नीचे आगया और कुचल कर मर गया। तालाब के मेंढक ने एक ठंडी सांस लेते हुए कहा—अभागा, स्वच्छ पानी का सुख भी न ले सका और विपत्ति से भी न बच सका।

खतरे से डर कर दुरवस्था में पड़े रहने वाले कायर कुत्ते की मौत मरते हैं।

(४)

एक बहेलिया चिड़ियाँ पकड़ने के लिए पेड़ पर चढ़ रहा था कि डाली से लपटे हुए साँप ने उसे डस लिया। बहेलिया यह कहता हुआ मूर्छित होकर जमीन पर गिर पड़ा कि—जो निर्बलों को सताता है उसे सताने के लिए ईश्वर दूसरे बलवान को भेजता है।

(५)

नदी में नहाते नहाते एक लड़के का पैर फिसल गया वह पानी में डुबकियां लेने लगा। इतने में एक पंडित उधर से निकला। वह लड़के को पानी में नहाने की बेवकूफी के लिये फटकारने लगा और स्नान कैसे करना चाहिए यह उपदेश देने लगा। लड़के ने दुखी होकर कहा—महोदय! पहले मुझे पानी में से बाहर निकाल लीजिए तब उपदेश दीजिए। वरना आपका उपदेश सुनने से पहले ही मैं डूबकर मर जाऊँगा।

क्रियात्मक सहायता न करके केवल उपदेश देना बेकार है।

(६)

एक माली मरने लगा तो उसके लड़कों ने पूछा—आपका धन कहाँ रखा है? उसने कहा मैंने हर एक पेड़ के नीचे दो दो रुपये गाड़ कर रखे हैं। बाप मर गया तो लड़कों ने सारे पेड़ों के आस पास खोद डाला। पर वहाँ एक भी रुपया न मिला, लड़के बापको झूंठा समझने लगे। जब फसल आई तो हर एक पेड़ ने पिछली साल की बजाय दो दो रुपया ज्यादा के फल दिये। तब बड़े लड़के ने कहा—हमारे बाप ने झूंठ नहीं बोला। उसने हमें शिक्षा दी कि मेहनत करने से जरूर फायदा होता है।

परिश्रम, ही प्रत्यक्ष धन है।

(७)

एक कुम्हार का गधा बड़ा दुष्ट था। एक बार कुम्हार ने उस पर बर्तन लादे उन्हें तोड़ने के लिये गड्ढे की तरफ दौड़ा। कुम्हार ने उसे बहुत रोका और कहा—मेरे बर्तनों का अधिक तेरी देह का नुकसान होगा वह यह न माना और अपनी जिद पूरी करने के लिये गड्ढे में कूद पड़ा और बर्तनों के साथ चूर चूर होगया।

दुष्ट लोग दूसरों को नुकसान पहुंचाने के लिए अपना और भी अधिक नुकसान कर लेते हैं।

कपड़ों के दाग़ कैसे छूटें ?

कपड़ों पर जो चाय आदि के गिर जाने से दाग़ पड़ जाते हैं—और जिनके कारण वस्त्र बुरा लगने लगता है—उन दागों को दूर करने के कुछ उपाय पाठकों की परीक्षार्थ नीचे अङ्कित किये जाते हैं।

१—लोहे के धब्बे—नींबू के रस में नमक मिलाकर मलने से बिलकुल साफ हो जाते हैं।

२—चाय और कहवा—इन दोनों का दाग़ सुहागे के पानी से दूर हो जाता है।

३—वार्निश—का दाग़ अमोनिया और तारपीन से धोने मिट जाता है।

४—खून का दाग़ नमक के पानी से छूट जाता है।

५—स्याही का दाग़ सिरके को पानी में गरम करके उसी पानी से कपड़ा धो दो, स्याही का धब्बा छूट जायगा। सिरके का दाग़ साबुन और गरम पानी से छूट जाता है।

६—मेंहदी और फलों का दाग़—कबूतर की बीट पानी में छोड़कर मलने से छूट जाता है। सूखा हुआ दाग़ नींबू के रस से छूट जाता है। नींबू का रस लगाकर सुखाने के बाद धोना चाहिये।

७—ऊनी कम्बल पर यदि तेल गिर जाये तो दही से मल देने से साफ हो जाता है।

८—ऊनी कपड़े को नींबू के अर्क में पानी मिला कर गरम करो, फिर साफ ब्रुश से ऊनी कपड़े के धब्बे पर वही पानी रगड़ो—धब्बा साफ हो जायगा।

९—रेशमी कपड़ों का धब्बा छुड़ाने के लिये पानी में सुहागा मिलाकर रेशम पर समुद्र फेन से धीरे धीरे रगड़ना चाहिये। इससे रेशम के मामूली धब्बे छूट जाते हैं।

१०—ऊँट की मेंगनी को पीस कर पानी में घोलो, फिर उसी पानी में चौबीस घन्टे तक कपड़े को पड़ा रहने दो और दूसरे दिन उसे धो डालो, फिर रीठा और साबुन के पानी से साफ करदो। इससे सब तरह के दाग़ वस्त्र से छूट जाते हैं।

इस्लाम में गोवध-निषेध।

१—'हरगिज़ नहीं पहुँचते अल्लाह के पास गोश्त और उनके खून, हां पहुंचती है अल्लाह के पास तुम्हारी परहेज़गारी। —कुरान-सूरए हज्ज

२—तहक़ीक़ अता की हमने तुमको कौसर। पस नमाज़ पढ़ो, अपने परवरदिगार की, और कुरबानी करो अपने नफ़्स की। —सूरए कौसर

३—'क्या देखते नहीं कि तहक़ीक़ हमने पैदा किया उनके वास्ते चौपायों को जो हमारे बनाये हुये हैं। पस, वह उनके मालिक हैं और मुसख्खर कर दिया हमने उन चौपायों को उनके वास्ते। पस, बाज़ इनमें से सवारियों के काम आते हैं, और बाज़ को इनमें से पालते हैं।' —सूरए यासीन

४—'गाय का मारने वाला, हरे वृक्ष के काटने वाला, और शराब का पीने वाला, नहीं बख्शा जायगा। —सूरए यासीन

ईसाइयत में गोवध-निषेध।

१—"जो बैल को काटता है वह उस आदमी की तरह है जो मनुष्य को मारता है।" —जबूर बाब ४६-२०।

२—"मैं तेरे घर का बैल न लूंगा और न तेरे बाड़े का बकरा। किन्तु जङ्गल के सब जानवर मेरे हैं क्या मैं बैलों का गोश्त खाता हूँ या बकरों का लहू पीता हूँ?" —ईसैया बाब १८-१६।

३-"तू खेत की पैदावार खायेगा, तू अपने मुंह के पसीने की रोटी खायेगा। —हजरत आदम से खुदा ने फर्माया।

४—"मैं कुरबानी को नहीं चाहता, बल्कि रहम को चाहता हूँ, तू गोश्त न खा, शराब न पी और ऐसा काम न कर कि जिससे तेरा भाई ठोकर खाए।' —इञ्जील।

मूर्ख अपने दुराचारों तथा अपनी मूर्खता को दूसरे के शिर पर पटकने की कोशिश में रहता है।

गंगा-जल

[श्रीमदनगोपाल सिंहल]

हिन्दू धर्मशास्त्रों में भगवती भागीरथी के जलकी बड़ी महिमा कही गई है तथा इसमें स्नान करने या जलपान करने का बड़ा माहात्म्य बतलाया गया है। गंगाजल की पवित्रता और उत्तमता को प्रमाणित करने के लिये अब आधुनिक साइन्स की भी बड़ी सहायता मिल सकती है। पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने भी गङ्गा जल की स्थूल शक्ति का निर्णय करके संसार की आंखें खोल दी हैं डाक्टर सी० ई० नल्सन एम० डी० महोदय ने 'गुड हैल्थ' नामक पत्र में लिखा है "गंगा को हिन्दू पवित्र समझते हैं और उनका कहना है कि—गंगा जल शुद्ध है और कभी दूषित नहीं होता। हम लोग गंगा जल को सदा दूषित समझते हैं, क्योंकि भारत के प्रधान नगर पवित्र काशी में ही लाखों मनुष्य अपना धर्म समझकर प्रतिदिन गंगा में स्नान कर उसे गन्दा करते हैं। नालियों के गन्दे जल, शव और कूड़ा कर्कट भी इसमें बहाये और फेंके जाते हैं। इस पर भी एक अद्भुत बात है कि कलकत्ते से इङ्गलैण्ड जाने वाले जहाज इसी गंगा के एक मुहाने हुगली नदी का मैला जल लेकर प्रस्थान करते हैं और यह जल इंगलैण्ड तक बराबर ताजा बना रहता है। इसके प्रति-कूल जो जहाज इङ्गलैण्ड से भारत को प्रस्थान करते हैं वे लण्डन से जो पानी लेकर चलते हैं वह बम्बई पहुँचने के समय तक ताजा नहीं रहता। इङ्गलैण्ड से जहाज कलकत्ता की अपेक्षा बम्बई एक सप्ताह पहिले ही पहुंच जाते हैं। जहाजों को पोर्ट सईद, स्वेज व अदन पर फिर ताजा पानी लेना पड़ता है, क्या इसका कारण यह है कि गंगा पवित्र है और इससे उसका जल भारत से इङ्गलैंड की यात्रा में ताजा बना रहता है और टेम्स नदी अपवित्र है इससे उसका पानी भारत पहुंचने तक ताजा नहीं रहता? यह कथन कि गंगाजल इतना दूषित होने पर भी ताजा बना रहता है कुछ अद्भुत सा प्रतीत होता है पर इस सम्बन्ध में बक्टीरिया सम्बन्धी जो अन्वेषण हुए हैं उनसे उपयुक्त कथन की पुष्टि होती है।"

इतना ही नहीं पाश्चात्य वैज्ञानिकोंने आधुनिक चिकित्सा शास्त्र की कसौटी पर कस कर भी गंगाजल को आश्चर्यकारी ही पाया है। भारत में सरकारी की ओरसे नियुक्त सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक मिस्टर हैंकिन ने गंगाजल का वैज्ञानिक यन्त्रों द्वारा परीक्षण कर यह सिद्ध किया है कि गंगाजल में हैजेके कीड़ों को नष्ट करने की प्रबल शक्ति विद्यमान है। उन्होंने काशी आकर स्वयं गंगाजल की परीक्षा की और देखा कि काशीके गन्दे नालों का जो जल गंगाजी में गिरता है उसमें हैजेके लाखों कीट रहते हैं, किन्तु गंगाजल में मिलने के कुछ समय पश्चात् ही सब मर जाते हैं। उन्होंने गंगामें बहते एक मुर्दे को पकड़ कर उसकी परीक्षा की तो उसमें हैजेके कीट पाये, किन्तु कुछ समय पश्चात् ही वे सब नष्ट होगये। इसके पश्चात् उन्होंने लाख लाख हैजेके कीट गंगाजल में तथा साथ ही शुद्ध कूपके जलमें छोड़े, किन्तु आश्चर्य के साथ देखा गया कि कुछ समय पश्चात् गंगाजल में छोड़े गये समस्त कीट नष्ट होगये, किन्तु कूपजल में छोड़े गये कीट बढ़कर असंख्य होगये। यह देखकर उन्होंने आश्चर्य के साथ लिखा कि—हिन्दू लोग गंगाजल को जो इतना पवित्र और गंगाको देवी मानते हैं, इसके भीतर कुछ तत्व है। स्वेदज कीट विज्ञान का पता प्राचीन कालके हिन्दुओं को कैसे लगा? क्या प्राचीन कालमें भी भारतमें ऐसे विज्ञान-वित् पण्डित थे? हमें मालूम होता है कि जिस समय समस्त संसार असभ्यता के अन्धकूप में डूबा हुआ था उस समय हिन्दू जातिकी सभ्यता पराकाष्ठा को पहुँची हुई थी।

गंगाजलमें हैजेके कीड़ों को नष्ट करने वाली इस बात का समर्थन पेरिसके विख्यात डाक्टर मिस्टर हेरेलन भी किया है: भारतमें जब हैजे और पेचिशके रोग व्यापकरूपसे फैले थे और इन रोगों से मरे व्यक्तियों के शव गंगामें फेंक दिये जाते तब उक्त डाक्टर महोदयने इन शवोंके कुछ ही फुट नीचे गंगाजल की परीक्षा करके देखा कि वहाँ हैजे और पेचिशके लाखों कीटाणुओं के होनेकी आशा थी वहाँ

वास्तवमें उनका एक भी कीटाणु नहीं था। डाक्टर महोदय ने तब इन रोगोंके आक्रान्त रोगियोंसे रोग कीटाणु उत्पन्न किये और उन उत्पन्न किये गये कीटाणुओं पर गंगाजल डाला। उनके आश्चर्य की सीमा न रही जब कुछ समय पश्चात् ही उन्होंने देखा कि रोगोंके सब कीटाणु मर गये। इससे उन्होंने यह सिद्ध किया कि हैजे और आँवसे आक्रान्त रोगियोंके लिये गंगाजल औषधके रूपमें प्रयुक्त होसकता है। डाक्टर हेरेलके उपर्युक्त कथनकी पुष्टि 'ब्रिटिश मेडिकल जर्नल' ने भी की है।

केवल हैजा ही नहीं, किन्तु अभी पिछले दिनों इंगलैण्डके सुप्रसिद्ध डाक्टर के० निटाने यह भी सिद्ध किया है, कि गंगाजल के प्रयोगसे सन्निपात ज्वर और संग्रहणी भी नष्ट होजाते हैं। उक्त डाक्टर महोदयने गंगाजलसे ही इन रोगों से पीड़ित अनेक रोगियोंकी चिकित्सा भी सफलता-पूर्वक की है।

अभी पिछले दिनों 'स्टेट्समैन' पत्रमें प्रकाशित हुआ था, कि-'गंगाजल में कुष्ट अपरोपण करने की भी अद्भुत शक्ति है। इसका कारण यह कहा जाता है कि गंगाजल का प्रवाह जिस भूमि भाग परसे जाता है उसमें रेडियम के समान वस्तु होनी चाहिये जिससे प्रवाहित जलमें उपयुक्त गुण दिखाई देता है।'

डाक्टर रिचर्डसनने तो उससे भी अधिक आश्चर्यमयी एक बात लिखी है और वह यह कि 'गंगा' 'गंगा' कहने और उसके दर्शन करने मात्रसे मानव हृदय पर उत्तम प्रभाव पड़ता है।

गंगाजलकी इन्हीं स्थूल और सूक्ष्म दैवी शक्तियोंका अनुभव कर धर्म ग्रन्थोंमें गंगास्नान और गंगाजल पानका इतना महत्व वर्णन किया है।

भूल तो मनुष्य से हो ही जाती है। किन्तु बुद्धिमान तथा गुणवान वह है, जो अपनी भूल को मान लेता है।

धन की अभिलाषा रखने के बजाय सुख की चाहना करो, क्योंकि धन तो तिजोरी में बन्द रहता है और सुख सन्तोष में। अतः धन से प्राप्त नहीं हो सकती है।

संघर्ष नहीं, सहयोग ?

[श्री रवीन्द्र नाथ टैगोर]

सृष्टि ईश्वर की अनन्त स्वतंत्रता का परिणाम है। यही स्वतंत्रता सच्ची स्वतंत्रता है जिससे सत्य का प्रकाश होता है। हम अभी तक इस अवस्था तक पूरी तरह से नहीं पहुँचे हैं पर जो लोग इस स्वतंत्रता को एक बड़ी भारी बात समझते हैं, जो इस पर विश्वास रखते हैं और इसको प्राप्त करना चाहते हैं वे लोग निश्चय ही अपने प्रयत्नों से स्वतंत्रता को लाने का मार्ग तैयार कर रहे हैं हिन्दुस्तान हमेशा से मनुष्य की सच्ची आध्यात्मिक शक्ति पर विश्वास करता आया है इस आत्मिक शक्ति को प्राप्त करने के लिए उसने अनेक तप, योग, व्रत इत्यादि किये हैं। इसी लिए मेरा विचार है कि असली भारतवर्ष एक देश ही नहीं, बल्कि एक आदर्श है। भारतवर्ष तभी विजय प्राप्त करेगा जब इस आदर्श की विजय संसार में होगी। वेद में लिखा है कि "पुरुषं महान्तमादित्य वर्णं तमसः परस्तात्" अर्थात् सूर्य के समान तेज वाला परब्रह्म परमेश्वर का प्रकाश अन्धकार या तमोगुण के परे है। हमारा युद्ध भी इसी तमोगुण के साथ है, हमारा उद्देश्य यह है कि अनन्त परब्रह्म का प्रकाश हमारे अन्दर हो। परब्रह्म का यह प्रकाश सिर्फ अलग अलग आदमियों में उत्पन्न होने से ही काम न चलेगा उसका प्रकाश मनुष्य मात्र में होना चाहिए। जिस तमोगुण का हम नाश करना चाहते हैं वह लोगों का जातीय स्वार्थ है। भारतवर्ष का आदर्श सदा से इस बात के विरुद्ध रहा है कि भारतीय अपने को दूसरी जातियों से अलग समझ कर उनसे निरन्तर युद्ध करते रहें। इस लिए मेरी प्रार्थना है कि भारत संसार की कुल जातियों के साथ सहयोग करे।

नेत्रों की ज्योति।

(वैद्यभूषण पं० बालकृष्ण शर्मा विशारद)

नेत्रों की ज्योति मंद होने के प्रायः निम्नलिखित कारण हैं। इनसे बचने का सदा सर्वदा प्रयत्न करते रहना चाहिये:—

१-मूर्द्धा (दिमाग) को विशेष सरदी वा गरमी पहुँचाना

२-अधिक धूप, आग या रोशनी को देखा करना जैसे सिनेमा का व्यसन।

३-बहुत ऊष्ण जल सिर पर डालना।

४-नेत्रों को बहुत गर्म या सर्द हवा के झोंके लगना।

५-नेत्रों में अधिक धूल,धुँआ या भाप लगना विशेषकर जहरीली वस्तुओं की भाप बहुत ही हानिकर है।

६-बहुत बारीक वस्तु बार-बार देखना तथा बहुत ही महीन अक्षर लिखना और पढ़ना।

७-कम प्रकाश में पढ़ने का प्रयत्न करना।

८-तेज रंगों को देखा करना। हरियाली का देखना नेत्र ज्योति के लिए हितकर है।

९-रूखा भोजन करना।

१०-शिर में उत्तम तेल न लगाना। सिर में डालने के तेल आयुर्वेद पद्धति से बने हुए होना चाहिये। बाजारू सेंट या एसेन्स पर बने हुए न होना चाहिये।

११-लेटे लेटे गाना या पढ़ना।

१२-मिट्टी के तेल की खुली रोशनी में रहना।

१३-ब्रह्मचर्य्य से न रहना।

१४-अति परिश्रम करना।

१५-तेज औषधियों का सेवन जैसे कुचला आदि या अन्य उष्ण प्रकृति औषधियों का सेवन अथवा गरम रूक्ष भोजन करना।

१६-तेरह वेगों को रोकना, उनमें विशेष कर अश्रु।

१७-अधिक चिन्ता या दुःख से रोते रहना।

१८-ऐसी ऐनक का उपयोग करना जिसमें वस्तु वा अक्षर बड़े दृष्टि में आवें।

१९-झुककर बैठकर काम करना।

नेत्रोपकारक बर्ताव

१-मुंह और आंखों को नित्य ठंडे पानी से धोना।

२-कोई अच्छा सुरमा या अंजन लगाना जो कि किसी सद्वैद्य द्वारा बना हुआ हो।

३-ऋतुओं के अनुसार मस्तक पर अनुलेपन लगाना जैसे चन्दन का लेप, ऋतु के अनुसार दोनों को मिलाना।

४-सिर में तेल नित्य डालना, विशेषकर क्षौर कर्म के पीछे।

५-हो सके तो नवनीत (माखन) या सद्यःघृत १ तोला, मिश्री १ तोला बादाम गिरी ५ काली मिर्च १५ नित्य खाना।

६-गो-घृत दो तोले में चार रत्ती केशर अथवा १ रत्ती कस्तूरी मिलाकर रखना और उसका नास लेना।

७-त्रिफला पाक नित्य दो तोला फाल्गुन चैत में यानी बसन्त ऋतु में ४० दिनों तक खाना।

८-प्रति आठवें दिन रसांजन (रसौत) से आंखों का मलिन जल और मैल निकालना।

९-प्रतिमास एक किसी उत्तम नस्य से मूर्द्धादि की सफाई करना।

१०-नेत्रों में कोई रोग हो तो किसी नेत्र विशेषज्ञ से उपचार शीघ्र करवाना चाहिये।

इस उपर्युक्त आवश्यक बातों पर बचपन से ही ध्यान दिया जायगा तो वृद्धावस्था में दृष्टि पूर्ण रूप से स्थिर रहेगी और नेत्रों को कोई बीमारी होने की सम्भावना नहीं रहेगी। आप ऐनक लगाने की आपत्ति से भी बचे रहेंगे।

—ग्राम-सुधार

कथा—

ऋण मुक्ति बिना शान्ति नहीं।

नदी के दाहिनी ओर स्काटलेण्ड में पार्थ नामक नगरी में फौजी छावनी के पास अपनी झोंपड़ियां बनाकर दो गरीब विधवायें रहती थीं। एक का नाम था एनी दूसरी का मालय। इन दोनों में बहुत प्रेम था। मजदूरी करने साथ साथ जातीं और साथ भोजन बनातीं। उनकी दुनियां बहुत छोटी थी पर थी संतोष पूर्ण।

मृत्यु राजा और रङ्क का भेद नहीं पहचानती। मालय को निमोनिया हुआ और एक सप्ताह बीमार रह कर मर गई। अब ऐना अकेली थी। कई दिन उसे बड़ा दुख रहा। फिर आखिर उसे संतोष करना पड़ा। वह अकेली मजदूरी करने जाती और अकेली ही सो रहती। अब अकेलापन भी उसे अखरता न था।

एक रात को ऐनी बिस्तर पर लेटी हुई थी कि अचानक मालय वहाँ आखड़ी हुई। ऐनी ने आँखें मल २ कर देखा और यह तो मालय ही है। बेचारी दुखिया बहुत डरने लगी मालयने कहा-ऐनी डरो नहीं। तुम समझती हो कि मैं मर गई हूं, पर मृत्यु के बाद भी मैं जीवित हूँ। तुम्हें कोई कष्ट देने नहीं आई हूं, किन्तु एक विनम्र प्रार्थना करती हूँ यदि उसे स्वीकार कर सको तो बहुत कृतज्ञ हूंगी।

ऐनी को हिम्मत बँधी और साहस करके पूछा— "हाँ कहो मालय, क्या चाहती हो, मालय की छाया मूर्ति ने कहा— मेरे ऊपर तेरह आने कर्ज है। सो तुम उसे चुका देना, क्यों कि बिना उस ऋण को चुकाये मेरी आत्मा को शान्ति नहीं मिल सकती। तुमसे चुकाने के लिए इसलिए कहती हूं कि तुम्हारे पास मेरे पुराने बर्तन कपड़े भी तो रह गये हैं जो तेरह आने से कम कीमत के नहीं हैं। इतना कह कर मालय अन्तर्ध्यान होगई।"

दूसरे दिन प्रातःकाल ही ऐनी उठी और रात की प्रतिज्ञा को पूरी करने के लिए बटुए में तेरह आने रखकर घर से बाहर निकली, पर यह पैसे किसे देने हैं, यह तो उसे याद ही न था। या तो मालय ने ऋणदाता का नाम बताया ही नहीं था या बताया था तो वह भूल गई थी। अब क्या किया जाय ? एनी बड़ी द्विविधा में पड़ गई।

सोचते सोचते एक विचार उसे आया कि किसी आध्यात्मवादी पादरी के पास चलना चाहिए। वह अपने एक परिचित पादरी रेवेण्डरचार्ल्स के मकान पर पहुंची और उनसे सब वृत्तान्त कह सुनाया।

पादरी बड़े दयालु और सहृदय सज्जन थे। उन्होंने इस सम्बन्ध में दिलचस्पी दिखाई और ऋणदाता की तलाश करने के लिए ऐनी के साथ चल दिये। उन्होंने ढूँढ़ा कि किस किससे यह उधार लिया करती थी। आखिर एक मोदी का पता मालूम हुआ जिससे वह आटा दाल खरीदा करती थी। पादरी उसी के पास गया और पूछा कि मृतक मालय से तुम्हारा कुछ हिसाब किताब तो शेष था। मोदी को जबानी कुछ याद न था। उसने हिसाब बही ढूंढ़ी तो उसमें मालय के नाम तेरह आने पैसे लिखे हुए थे।

पादरी चार्ल्स ने मोदी को वह पैसे चुका दिये। फिर मालय को छाया मूर्ति को कभी किसी ने नहीं देखा।

उपरोक्त घटना का उल्लेख डाक्टर विम्स ने अपने Anotomy of Melancholy नामक ग्रन्थ में किया है। यह घटना उन्हें काउण्ट के राजगुरू धर्माचार्य सर जवेरी ने बताई थी।

जो मनुष्य अपनी गलतियों तथा निर्बलताओं को प्रकाश में आना सहन नहीं कर सकता है। उसका सत्य के रास्ते पर चलना मुश्किल है।

सच्चा ज्ञानी।

(पं० रामदयाल शर्मा, तिलहर)

—:*:—

महाराज पाण्डु और धृतराष्ट्र के पुत्र जब विद्याध्ययन के योग्य हुए तो उन्हें गुरु के समीप विद्या पढ़ने के लिए भेजा गया। गुरुकुल में पाण्डवों और कौरवों की शिक्षा दीक्षा की समुचित व्यवस्था चलने लगी।

एक दिन आचार्य ने बालकों को पाठ दिया 'सत्यंवद' दूसरे दिन सबने उसे रट कर ठीक-ठीक सुना दिया, परन्तु युधिष्ठिर ने कहा—गुरु जी! मैं अभी उस पाठको याद न कर सका। गुरु ने दूसरे दिन याद कर लाने के लिए आदेश किया। दूसरे दिन भी युधिष्ठिर ने वही उत्तर दिया—अभी मैं याद नहीं कर सका। रोज उन्हें आचार्य का आदेश मिलता—'कल जरूर याद कर लाना।' दूसरे दिन युधिष्ठिर का भी यही उत्तर होता—याद न कर सका। इस क्रम को चलते हुए कई दिन व्यतीत होगए।

अनन्तः आचार्य ने युधिष्ठिर को खूब झिड़का और कहा—जरा सी बात याद करने में तुमने इतने दिन लगा दिये। युधिष्ठिर ने गुरु की पद-रज शिर पर चढ़ाते हुए विनय पूर्वक निवेदन किया—गुरुवर! वह छोटासा शब्द तो मुझे उसी क्षण याद होगया था और अन्य बालकों की भाँति तोते की तरह तो कभी का सुना चुका होता, पर इतने मात्र से वह शिक्षा पूरी नहीं होती। आपका पढ़ाना और मेरा पढ़ना तभी सार्थक हो सकता है, जब मैं 'सत्यंवद' की शिक्षा को हृदय के गहरे अन्तस्तल तक उतारलूँ और मेरा जीवन उसी से ओत प्रोत हो जाय।

आचार्य का हृदय गद्गद् हो आया। उनने सच्चे शिष्य युधिष्ठिर को छाती से लगा कर कहा—बेटा! शिक्षा का सच्चा तत्व तुमने समझ लिया, लाखों पुस्तकें पढ़ने और हजारों गुरुओं के उपदेश श्रवण करने से भी कुछ लाभ नहीं, यदि धर्म का आचरण न किया जाय। आचरण ही मुख्य है, बहुत पढ़ने वाला ज्ञानी नहीं वरन् सच्चा ज्ञानी वह है, जो भले ही कम जानता हो पर जितना जानता है, उसे ठीक तरह अपने जीवन में प्रयोग करता है।

देश निकाला (स्व० श्रीरवीन्द्रनाथ टैगोर)

दूत ने आकर सम्राट् को उत्तर दिया, महाराज! आपके आदेशानुसार मैंने सन्त नरोत्तम से कह दिया था, कि सम्राट् आपको राज-मन्दिर में पधारने के लिए बुलाते हैं, पर उन्होंने इसे बिलकुल अस्वीकार कर दिया।

सम्राट् सन्त नरोत्तम को लाने के लिए स्वयं चल दिये। उन्हों ने सन्त के निकट जाकर उन्हें प्रणाम किया और कहा—महात्मन्! ईश्वर भक्ति का प्रचार करने के लिए उचित स्थान मेरा बनवाया हुआ स्वर्ण खचित राज-मन्दिर मौजूद है, उसे छोड़ कर आप इस धूलि भरे राज पथ में क्यों बैठे हैं?

सन्त नरोत्तम ने अपनी गंभीर सुमधुर गिरा में से अमृत बरसाते हुए कहा—'राजन्! आपके राज मन्दिर में इसलिए नहीं जा सकता, कि वहाँ मेरे भगवान नहीं हैं।'

सम्राट् की भवें तन गईं। उनने क्रुद्ध होकर कहा—'आपको पता नहीं, मैंने विपुल सम्पत्ति लगाकर वह कलापूर्ण स्वर्ण मन्दिर बनवाया है और बड़े भारी यज्ञ अनुष्ठानों के उपरान्त भगवान की मूर्ति प्रतिष्ठित की गई है।'

सन्त ने कहा—राजन्! सो तो मैं जानता हूँ। पर यह भी जानता हूँ कि जिस वर्ष यह मन्दिर बन कर तैयार हुआ था, उसी वर्ष अग्निकाण्ड से हजारों मनुष्य के घर जल कर खाक होगये थे, और जब वे निराश्रित लोग इस मन्दिर के एक कोने में आश्रय मांगने आये तो आपने उनसे मना कर दिया था।

राजा ने पूछा—मना कर देने से मन्दिर में क्या दोष आया?

सन्त का कंठ रुँध गया—उसने बताया मेरे भगवान ने उसी वक्त कहा था कि 'जिस घर में पीड़ित, दुखी और असहाय लोग आश्रय नहीं पा सकते, वह मेरा घर नहीं हो सकता। सो हे राजन्! तुम्हारे सोने के मन्दिर में अहंकार की पाषाण प्रतिमा बैठी हुई है। मेरे भगवान तो यहां धूलि भरे राज-पथ में आम के ऊपर बैठे रहे हैं।

सम्राट् क्रोध से कांपने लगे—उसने कड़क कहा—मेरे देश से निकल जाओ।'

सन्त ने असीम शान्ति के साथ उत्तर दिया 'ठीक है, जिस देश से आपने मेरे भगवान को निकाल दिया है, उससे मुझे भी निकल जाना चाहिए।'

भक्ति का मर्म

[पं० प्रभादी लाल शर्मा 'दिनेश' कायदल]

एकबार नारदजी ईश्वर भक्ति का प्रचार करते भूलोक में भ्रमण कर रहे थे। तो उन्होंने सर्वत्र अपनी भक्ति भावना की बहुत प्रशंसा सुनी। नारद जी ने समझा मैं ही सबसे बड़ा भक्त हूँ। अपने इस अभिमान की पुष्टि कराने के निमित्त वे वैकुण्ठ लोक में विष्णु भगवान के पास पहुँचे। भगवान से उन्होंने कहा "प्रभो! मर्त्यलोक में मुझे सबसे बड़ा ईश्वर भक्त समझा जा रहा है सो आप बताइये कि क्या मैं वास्तव में सबसे बड़ा भक्त हूँ, यदि मुझसे भी बड़ा कोई और भक्त है तो उसका नाम बताइए जिससे मैं उसके पास जाकर भक्ति करना सीखूँ!"

भगवान मुस्कराये और बोले—देवर्षि, वैसे तो आप श्रेष्ठ भक्त हैं, पर ऐसा मत समझिए कि आपसे बढ़कर और कोई भक्त नहीं है। यदि भक्ति में और आगे बढ़ने की इच्छा है तो मैं बताता हूँ कि अमुक ग्राम में अमुक किसान के पास चले जाओ, वह आपसे भी बड़ा भक्त है और आपको बहुत कुछ शिक्षा प्रदान करेगा!

भगवान के वचन सुन कर नारद ने अपनी वीणा उठाई और 'हे नाथ नारायण वासुदेव' जपते हुए उस किसान के दरवाजे पर जा पहुँचे। किसान हल जोत कर लौट रहा था! नारद ने उसे प्रणाम किया और भगवान के सारे वचन सुनाते हुए भक्ति योग की शिक्षा देने की प्रार्थना करने लगे।

किसान ने बैलों को यथा स्थान बाँधा और हल को कन्धे पर से उतार कर कोने में रखा, तदुपरान्त देवर्षि को आसन देकर हाथ जोड़ कर कहा—भगवन्! मैं सीधा सादा किसान हूँ। कुछ अक्षर पढ़ा नहीं और संध्या, भजन भी कुछ नहीं जानता! मालूम होता है किसी ने आपको बहका दिया है। मैंने न तो कोई योग सीखा है न ज्ञान भक्ति के बारे में कुछ जानता हूँ। धर्म पूर्वक अपनी जीविका उपार्जन करता हूँ, और अपना कर्तव्य पालन करने में सचाई के साथ लगा रहता हूँ!

नारद ने पहले तो यह समझा कि किसान बना-वटी बात कह रहा है यह जरूर कोई पहुँचा हुआ सिद्ध होगा, पर अनेक प्रकार से जब उसने परीक्षा करली कि यह झूँठ नहीं बोलता जो बात है उसे सत्य सत्य कह रहा है, तब नारद उठ खड़े हुए विष्णु भगवान के पास जा धमके।

भगवान ने उनकी मनो भावनाएँ पहचान लीं और हँसते हुए कहा—नारद! ऐसा मत समझो कि मैंने बहका दिया था और उस अपढ़ किसान के पास भक्ति सीखने के लिये भेज कर तुम्हारा उपहास किया था, देखो, सत्यबात यह है कि असल में वह किसान ही बड़ा भक्त है! नामधारी भक्तों की तरह वह तरह तरह के आडम्बर बनाना नहीं जानता है तो भी वह अपने कर्तव्य धर्म को सचाई से पालन करता है। हे नारद! तुम जानते ही हो कि भक्त मंडली में काम से जी चुराने वाले, मुफ्त की वाहवाही लूटने वाले, तथा नाम जप और कीर्तन की आड़ में अपने पाप छिपाने वाले ही अधिक होते हैं। यह ढोंगी मुझे जरा भी पसंद नहीं मैं तो धर्म पूर्वक आचरण करने वाले और सचाई से अपना कर्तव्य पालन करते रहने वाले लोगों को ही प्यार करता हूँ, और उन्हें ही सच्चा भक्त समझता हूँ! देवर्षि तुम्हारा कीर्तन कार्य, नाम जप, भक्ति प्रचार सराहनीय है पर अपने साधारण काम को सचाई और ईमानदारी से करते रहने वाले उस किसान की अपेक्षा तुम कुछ ऊँचे नहीं हो।

नारद जी की आँखें खुल गईं और उन्होंने भगवान का चरण वन्दन करते हुए कहा—आज मैंने भक्ति का सच्चा मर्म समझा है और अब लोगों को कर्तव्य धर्म में सचाई के साथ रत रहने का ही उपदेश किया करूँगा।

यह कह कर नारद जी वीणा बजाते, हरिगुण गाते, ज्ञान प्रसार के लिए भूलोक की ओर चल दिए।

सच्चे लाभ की साधना

[श्री राधाकान्त मुण्ड, खरियार]

कंचनपुर नगर में एक राजा राज्य करता था, उसके कोई सन्तान न थी। बहुत तपस्या के उपरान्त एक परमसुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई। जब कन्या विवाह योग्य हुई, तब राजा ने देश देशान्तर के राजाओं को स्वयंवर के लिए बुलाया, किन्तु उस राजकुमारी ने किसी भी राजकुमार को स्वीकार न किया। होते होते बहुत दिन गुजर गये।

एक दिन रात्रि के समय राजा शयनागार में गये हुए थे तब रानी ने पति से कहा "राजन्! राजकुमारी का विचार किसी धर्म परायण परोपकारी योगी से विवाह करने का है वह भोग ऐश्वर्य की अपेक्षा आत्म उन्नति में सहायता करने वाला साथी चाहती है। कष्ट और निर्धनता की उसे जरा भी परवाह नहीं। इसलिए आप किसी योगी के साथ उसका विवाह करने का प्रयत्न कीजिए।"

राजा को पहले तो यह प्रस्ताव पसंद न आया, पर जब रानी ने प्राचीन इतिहास बताते हुए पार्वती, सावित्री, सुकन्या आदि अनेक राजपुत्रियों का विवाह योगियों के साथ होने के उदाहरण दिये तो राजा सहमत होगया और दूसरे दिन योगी की तलाश में जाने का उसने निश्चय कर लिया।

राजा और रानी में जिस समय यह वार्तालाप होरहा था, ठीक उसी समय एक चोर शयनागार के निकट चोरी के उद्देश्य से छिपा हुआ यह सब बातें सुन रहा था। उसने सोचा मैं ही योगी का वेष बनाकर राजा के मार्ग में क्यों न बैठ जाऊं, जिससे राजकुमारी का पाणिग्रहण तथा राज्य का उत्तराधिकार मुझे ही प्राप्त होजाय? चोर के मन में यह बात बैठ गई। वह तुरंत ही वहां से उलटे पांव लौट गया और घर आकर योगी का वेष बना, प्रभात होने से पूर्व राजा के जाने के मार्ग पर जा बैठा।

प्रभात होने पर राजा, योगी वर की तलाश में निकला। उसने कुछ ही दूर आगे चलने पर एक स्वस्थ शरीर, योगी युवक को ध्यान मग्न देखा। राजा वहीं ठहर गया और किसी प्रकार प्रार्थना अनुरोध से उसे विवाह के लिये तैयार करके घर ले आया। राजा रानी असाधारण रीति से अपने भावी जामाता का स्वागत सत्कार करने लगे। विवाह की तिथि निश्चय होगई।

चोर मन ही मन विचार करने लगा कि जिस योग का आडंबर करने मात्र से इतना लाभ होरहा है यदि सच्चे मन से उसकी साधना की जाय तो न जाने कितना लाभ होगा, बुद्धिमानों ने कहा है कि "बड़े लाभ के लिए छोटे लाभ का त्याग करना चाहिए।" इसलिए मुझे सच्चे योग की साधना करके अपार लाभ प्राप्त करना चाहिये।

चोर ने राजा से विवाह की अस्वीकृति प्रकट कर दी और सच्चे साधक के रूप में वह तप करने के लिये चला गया।

अमृत मय दोहे।

[श्री किशनजी अग्रवाल 'प्रसाद' हरदा]

मानुष तन को पाय के, करै नहीं सतसंग।
ज्यों पारस को पाय के, दीन रहे मति भंग॥
पढ़ि पढ़ि के पंडित भये, भये न किया ध्यान।
ज्यों गंगा तट आवई, प्यासा रहे अजान॥
पढ़ पढ़ के ज्ञानी भये, मिट्यो नहीं तन ताप।
राम राम तोता रटे, कटै न बन्धन पाप॥
वेद शास्त्र सब कंठ कर, बने बहुत वाचाल।
बिना कर्म के गति नहीं, घूम रह्यो सिरकाल॥
केवल पुस्तक के पढ़े, न [illegible] न आय।
षट्रस भोजन बरनते, बिन पाये न अघाय॥
बढ़ बढ़ के बातें करे, नहीं किसी की शान।
लाखों धरे खजानची, करे न कौड़ी दान॥

कथा

प्रभुता का मद

उच्च पद प्राप्त करने के लिए उन्नत हृदय की आवश्यकता है। जिनका हृदय महान् है वे ही महान् कर्तव्यों को पूरा कर सकते हैं। नीच वृत्तियों के स्वार्थी मनुष्यों के हाथ में यदि कभी उत्तरदायित्व पूर्ण कार्यों को पाजावें या उस सत्ता को किसी प्रकार प्राप्त करलें तो वे उसका दुरुपयोग ही करेंगे।

राजा नहुष ने एक बार बड़ा प्रयत्न करके इन्द्र पद प्राप्त कर लिया था और वह शासक के दायित्व पूर्ण पद पर बैठ गया था। निश्चय ही नीच स्वभाव के मनुष्य उच्च पद को पाकर आपे से बाहर होजाते हैं और उन्हें एक प्रकार का उन्मादकारी नशा चढ़ जाता है जिसे प्रभुता का मद कहते हैं। इन्द्र पद को पाकर नहुष भी उन्मत्त हुआ। उसने शक्ति के घमंड में उचित अनुचित के भेद का परित्याग कर दिया।

नहुष की इच्छा हुई की भूतपूर्व इन्द्र की सती धर्म-पत्नी को उसकी इच्छा के विरुद्ध अपनी पत्नी बनाले। उसने यह प्रस्ताव इन्द्राणी के पास भेजा पर उसने उसकी इच्छा पूर्ण करने से साफ इनकार कर दिया। पर नहुष तो उसके रूप लावण्य पर मुग्ध होरहा था वह सत्ता के बल पर अपनी मनोवाञ्छा पूरी करने पर उतारू होगया।

इन्द्राणी ने देखा कि यों काम न चलेगा। काँटे से काँटे से निकालना चाहिये। जो दुष्ट अपने बल से न हराया जा सके उसे अन्य उपायों से भी नष्ट करा देना नीति है। इन्द्राणी ने इसी नीति से काम लिया और कहलवा भेजा कि राजा नहुष मेरे अन्तःपुर में ऋषियों को कहार बनाकर उनकी पालकी में बैठकर आ सकते हैं। कहते हैं कि कामातुर के भय और लज्जा नहीं रहती। नहुष ने निर्लज्जता पूर्वक अपनी तृप्ति के लिए ऋषियों को पालकी में जुतवा दिया और उनके ऊपर सवार होकर इन्द्राणी के अन्तःपुर के लिए चल दिया।

यदि इन्द्रियाँ बेकाबू हो जाय तो मनुष्य का अन्धा बना देती है, आँखें रखते हुए भी उसे भला बुरा कुछ नहीं सूझ पड़ता। वह पागल की तरह चाहे जो करने और करने लगता है। दुर्बल शरीर वाले ऋषि पालकी और राजा का भार लेकर बड़ी कठिनाई से चल रहे थे। पर राजा को इतना चैन कहाँ था, वह तो आधे पल के अन्दर इन्द्राणी के महल में पहुँचना चाहता था। ऋषियों का धीरे २ चलना उसे सहन न होसका और उसने उतावली एवं क्रोध के साथ 'सर्प' 'सर्प' अर्थात् जल्दी चलो, जल्दी चलो कहने लगा।

कोई कितना ही सहन-शील क्यों न हो अन्याय के विरुद्ध एक दिन उसकी आत्मा विद्रोह करती ही है। जो निरन्तर अन्याय सहन करता रहे और उसके प्रतिकार का गरम या ठंडा कोई उपाय न करे वह यथार्थ में मनुष्य कहा ही नहीं जा सकता। ऋषि लोग अन्याय सह रहे थे इसलिए कि इसका पाप घड़ा भर जाने दिया जाय तो अपने आप फूट जायगा। पर वह तो भर ही चुका था। ऋषियों की आत्मा विद्रोह कर उठी। उन्होंने समझा ऐसे समय पर भी चुप रहना क्षमा नहीं कायरता होगी।

उन्होंने पालकी को नीचे पटक दिया और शाप दिया कि—'मदान्ध' तू उचित अनुचित कुछ नहीं देखता और 'सर्प' सर्प ही चिल्लाता जाता है, जा तू सर्प ही होजायगा, पवित्र आत्माओं के वचन मिथ्या नहीं होते, ऋषियों के शाप से राजा सचमुच सर्प का होकर भूमि लोटने लगा.

× × ×

शक्ति और सत्ता बड़ी उत्तम वस्तुयें हैं, परन्तु यही जब किन्हीं दुष्ट स्वभाव के मनुष्यों के हाथ में चली जाती हैं तो न केवल संसार का ही अहित करती हैं, वरन् स्वयं उसका विनाश कर देती है।

समालोचना—

शान्ति सुधा—लेखक श्री राधेश्यामजी द्विवेदी वकील, प्रकाशक-केशव साहित्य कुटीर श्री करेरा (ग्वालियर) मूल्य १). हाथ के बने कागज पर सुन्दर छपी हुई ६२ पृष्ट की यह पुस्तक दाम्पत्ति जीवन में सुख शांति स्थापना के उद्देश्य से प्रकाशित की गई है। विद्वान् लेखक ने धर्म शास्त्रों के आधार पर पति और पत्नी को अपने अपने कर्त्तव्य पालन करने की मनोहर शिक्षा दी है जिन पर अमल करने वाले दम्पत्ति निश्चय ही सुख शांति से अपना जीवन बिता सकते हैं। लेखक का प्रयत्न सराहनीय है।

क्या जीवन जो हम जीते हैं ?

[सङ्कलन कर्त्ता—श्री० प्रकाश गुप्त]

क्या जीवन जो हम जीते हैं !

भय विस्मय साहस आशा लेकर हम वर्षों की माला संजोते,
कितने हम अनुताप अश्रु के मोती उसमें आज पिरोते।
कितना करुणापूर्ण विश्व में साँसों का इतिहास हमारा,
लिखते अपने रक्त बिंदु से जिसको हम सब हँसते रोते।
घोर हलाहल भव सागर का रुद्र रूप होकर पीते हैं॥

क्या जीवन जो हम जीते हैं ?

प्रलयानिल के झोंके आते दावानल की लपटें आतीं,
कितनी घटनावलियाँ शिक्षा देतीं लौट नीड़ कर जातीं।
मनुष्यता का मोल बढ़ा ? पर सत्य—तत्व किसने समझा है,
ईर्ष्या और महत्वाकांक्षा कितने हैं उत्पात मचाती।
हम कितना कुछ पाते जावें तो भी रीते के रीते हैं॥

क्या जीवन जो हम जीते हैं ?

जितने हम सुलझाते उलझा यह जीवन का ताना बाना,
रहने दो दर्शन की बातें तुमने जाना हमने जाना।
ज्ञान और विज्ञान न देंगे हमको शांति—सांत्वना जी भर,
कर लेते हो, दो—दिन हमको मिलो ! अपना ही "धन" गाना।
हमी बुद्धि के बखिये प्रतिदिन खुद उधेड़ते हैं, सीते हैं॥

क्या जीवन जो हम जीते हैं ?

हम अपना दृष्टांत स्वयं हैं, हृत्तन्त्री हैं आप बजाते,
बैठ किसी कोने में अपना गाना हमही सुनते गाते।
हम अपने में मस्त, हमें क्यों कोई छेड़े, राग बिगाड़े,
सुनले वह जिसको सुनना है उसी राह से आते—जाते।
जिस पर अविरत चलते-चलते लोगों को युग-युग बीते हैं॥

क्या जीवन जो हम जीते हैं ?

हम अपना मैदान बनाकर भागे—दौड़े, कूदे—खेले,
ढील पड़े फिर भी असंख्य से होकर हम तो आप अकेले।
हम अपने पाखों पर पंछी आप बाँधते साँस न लेते,
जग की विस्तृत रणस्थली में सुख भी भोगे, दुख भी झेले।
ऐसे तो कितने हो पाये यहीं आज तक मन चीते हैं॥

क्या जीवन जो हम जीते हैं ?